

**छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर****रिट याचिका (सिविल) क्रमांक-1735/2017**

(छत्तीसगढ़ राज्य अनुसूचित जन जाति आयोग द्वारा अ.ज.जा.आ./2016/विविध प्रकरण
क्रमांक - 612/2017 में पारित आदेश दिनांक 13-4-2017 से उद्भूत)

छत्तीसगढ़ राज्य विद्युत उत्पादन कंपनी लिमिटेड (विद्युत अधिनियम, 2003 के अनुसार निगमित), द्वारा- प्रभारी अधिकारी राजीव झा, आयु 48 वर्ष, पिता- जी.एस. झा, प्रबंधक (मानव संसाधन) सह कार्यपालक अभियंता, कार्यालय- मुख्य अभियंता (मानव संसाधन) कार्यालय, सीएसपीजीसीएल, रायपुर ।

बनाम

1. छत्तीसगढ़ राज्य अनुसूचित जन जाति आयोग, द्वारा- सचिव, 61, जलविहार कॉलोनी, रायपुर ।

2. रज्जू लाल धुव, 39 वर्ष, पिता - श्री पी.आर. धुव, क्वार्टर नंबर - एनबी/02, सीएसपीजीसीएल कॉलोनी, कोरबा ।

----- उत्तरवादीगण

याचिकाकर्ता की ओर से : श्री राजा शर्मा, अधिवक्ता।

उत्तरवादी क्रमांक-1 की ओर से : श्री ए.एस. कछवाहा, अधिवक्ता की ओर से श्री बी.एल. साहू, अधिवक्ता,

उत्तरवादी क्रमांक-2 की ओर से : श्री अखिलेश दलपति, अधिवक्ता।

माननीय न्यायमूर्ति संजय के. अग्रवाल**बोर्ड पर आदेश**

07/09/2017

1. श्री रज्जू लाल धुव, जो छत्तीसगढ़ राज्य विद्युत उत्पादन कंपनी लिमिटेड (संक्षेप में, 'सीएसपीजीसीएल') में मुख्य सुरक्षा अधिकारी के रूप में काम कर रहे थे - यहां



याचिकाकर्ता ने छत्तीसगढ़ राज्य अनुसूचित जनजाति आयोग, रायपुर में शिकायत की, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ कहा गया कि हालांकि वह अपने एसीआर में उन्नयन के हकदार हैं और भूतलक्षी प्रभाव से पदोन्नति के भी हकदार हैं और अधिकारी अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के तहत अधिकारियों के खिलाफ कार्रवाई करने के लिए बाध्य हैं, वे इसे मंजूरी नहीं दे रहे हैं, इसलिए उनके खिलाफ आवश्यक सिफारिश की जानी चाहिए और साथ ही उनके खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई की भी सिफारिश की जानी चाहिए। शिकायत प्राप्त होने पर उत्तरवादी क्रमांक - 1 आयोग ने याचिकाकर्ता को उक्त शिकायत के विरुद्ध जवाब दाखिल करने के लिए नोटिस जारी किया। याचिकाकर्ता कंपनी ने आपत्ति की कि ऐसा मामला विशुद्ध रूप से सेवा संबंधी विवाद है और आयोग द्वारा इस मामले पर संज्ञान नहीं लिया जा सकता। उक्त आक्षेपित आदेश द्वारा, उक्त प्रारंभिक आपत्ति को यह कहते हुए खारिज कर दिया गया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 16(4-ए) को छत्तीसगढ़ राज्य अनुसूचित जनजाति आयोग अधिनियम, 1995 (संक्षेप में, 'अधिनियम, 1995') की धारा 9(1)(ए) के साथ पढ़ने पर, आयोग को मामले की सुनवाई करने का क्षेत्राधिकार है और तदनुसार याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए क्षेत्राधिकार के संबंध में प्रारंभिक आपत्ति को खारिज कर दिया गया है। इस आदेश से व्यथित होकर तथा इसकी विधिमान्यता, वैधता और शुद्धता पर प्रश्न उठाते हुए यह रिट याचिका प्रस्तुत की गई है

2. याचिकाकर्ता - सीएसपीजीसीएल के विद्वान अधिवक्ता श्री राजा शर्मा ने निवेदन किया कि जिस रूप में शिकायत तैयार की गई और प्रस्तुत की गई है, वह अधिनियम, 1995 की धारा 9(1)(ए) के अंतर्गत नहीं आती है, और इस प्रकार, वर्तमान शिकायत पर विचार करना क्षेत्राधिकार और कानून के प्राधिकार के बिना है और इसलिए, इसे अपास्त किया जाना चाहिए।
3. दूसरी ओर, उत्तरवादीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री बी.एल. साहू और श्री अखिलेश दलपति ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया।
4. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है तथा ऊपर दिए गए प्रतिद्वन्द्वी तर्कों पर भी विचार किया है तथा अभिलेख का भी गहनतापूर्वक अध्ययन किया है।
5. छत्तीसगढ़ राज्य अनुसूचित जनजाति आयोग का गठन अधिनियम, 1995 की धारा 3 के अंतर्गत किया गया है। आयोग के कार्यों का प्रावधान अधिनियम, 1995 की



धारा-9 के अंतर्गत किया गया है। सुविधा की दृष्टि से अधिनियम, 1995 की धारा 9 का नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:-

9. (1) आयोग का यह कृत्य होगा कि वह -

- (क) अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को संविधान के अधीन तथा तत्समय प्रवृत्ति किसी अन्य विधि के अधीन दिये गये संरक्षण के लिये हितप्रहरी आयोग के रूप में कार्य करें।
 - (ख) किन्हीं विशिष्ट जनजातियों या जनजाति समुदायों या ऐसी जनजातियों या जनजाति समुदायों के भागों या उनमें के यूथों को संविधान (अनुसूचित जनजातियों) आदेश 1950 में सम्मिलित करने के लिये कदम उठाने के लिये राज्य सरकार को सिफारिश करना।
 - (ग) अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिये बने कार्यक्रमों के समुचित तथा यथा समय कार्यान्वयन की निगरानी को तथा राज्य सरकार अथवा किसी अन्य निकाय या प्राधिकरण के कार्यक्रमों के संबंध में जो ऐसे कार्यक्रमों के लिये जिम्मेदार हैं, सुधार हेतु सुझाव दे।
 - (घ) लोक सेवाओं तथा शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश के लिये अनुसूचित जनजातियों के लिये आरक्षण के संबंध में सलाह दें।
 - (ङ) ऐसे अन्य कृत्यों का पालन करें जो राज्य सरकार द्वारा उसे सौंपे जायें।
- (2) आयोग की सलाह साधारणतः राज्य सरकार पर आबद्ध कर होगी तथापि जहाँ सरकार सलाह को स्वीकार नहीं करती है वहाँ वह उसके लिये कारण अभिलिखित करेगी।"

6. अधिनियम, 1995 की धारा 9 की उपधारा (1) को ध्यानपूर्वक पढ़ने से पता चलता है कि आयोग का कार्य अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के हितों की रक्षा करना है, विशेष रूप से संविधान या किसी अन्य समय प्रवृत्त कानून के तहत उन्हें प्रदत्त संरक्षण की रक्षा करना और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के लिए कार्यक्रमों का समय पर कार्यान्वयन सुनिश्चित करना तथा सार्वजनिक सेवाओं में उनके लिए आरक्षण और शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश के संबंध में सलाह देना है। अधिनियम, 1995 की धारा 9 की उपधारा (2) के अनुसार आयोग की सलाह सामान्यतः सरकार के लिए बाध्यकारी होती है और इस प्रकार आयोग का कार्य



सलाहकारी/सिफारिशात्मक प्रकृति का होता है। अधिनियम, 1995 की योजना से ऐसा प्रतीत होता है कि आयोग को न्यायनिर्णयन संबंधी कार्य नहीं सौंपा गया है, यह केवल सलाहकारी/सिफारिश करने वाला निकाय है, जिसके पास सलाहकारी क्षेत्राधिकार है।

7. **भबानी प्रसाद जेना बनाम संयोजक सचिव, उड़ीसा राज्य महिला आयोग एवं अन्य¹** के मामले में, उच्चतम न्यायालय ने उड़ीसा राज्य महिला आयोग अधिनियम, 1993 की धारा 3 के अंतर्गत गठित राज्य महिला आयोग की शक्ति की सीमा पर विचार किया और अधिनियम की योजना का विश्लेषण करने के बाद, यह अभिनिर्धारित किया गया कि राज्य आयोग को पक्षों के अधिकारों का निर्णय करने या निर्धारण करने के लिए कोई शक्ति या प्राधिकार नहीं दिया गया है। इसे संक्षेप में इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया है :-

"10. दूसरे शब्दों में, राज्य आयोग को मोटे तौर पर आर्थिक, शैक्षिक और स्वास्थ्य देखभाल के मुद्दों पर अध्ययन करने का काम सौंपा गया है, जो राज्य की महिलाओं के समग्र विकास में मदद कर सकता है; महिलाओं के खिलाफ अपराधों से संबंधित आंकड़े इकट्ठा करना; महिलाओं पर अत्याचार, न्यूनतम मजदूरी, बुनियादी स्वास्थ्य, मातृत्व अधिकार आदि के संबंध में महिलाओं को उनके अधिकारों से वंचित करने से संबंधित शिकायतों की जांच करना और तथ्यों का पता चलने पर उपचारात्मक उपायों के लिए संबंधित अधिकारियों के साथ मामला उठाना; संकट में महिलाओं को एक मित्र, दार्शनिक और उनके विधिक अधिकारों के प्रवर्तन में मार्गदर्शक के रूप में मदद करना। हालाँकि, राज्य आयोग को पक्षों के अधिकारों पर निर्णय लेने या निर्धारण करने के लिए कोई शक्ति या अधिकार नहीं दिया गया है।

11. उत्तरवादी क्रमांक - 2 के विद्वान अधिवक्ता श्री रंजन मुखर्जी ने निवेदन किया कि जब राज्य आयोग को महिलाओं को उनके अधिकारों से वंचित करने से संबंधित मामले सहित शिकायतें प्राप्त करने की शक्ति दी गई है, तो यह निहित है कि राज्य आयोग इन शिकायतों पर निर्णय करने के लिए अधिकृत है। हमें डर है कि धारा 10(1)(डी) में ऐसी कोई निहित शक्ति नहीं पढ़ी जा सकती जैसा कि



विद्वान अधिवक्ता ने सुझाया है। धारा 10(1)(घ) में निहित प्रावधान स्पष्ट रूप से स्पष्ट है कि राज्य आयोग इसमें निर्दिष्ट मामलों के संबंध में शिकायतें प्राप्त कर सकता है और ऐसी शिकायतें प्राप्त होने पर उचित उपचारात्मक उपायों के लिए संबंधित अधिकारियों के साथ मामले को उठा सकता है। अधिनियम, 1993 में राज्य आयोग को न्यायालय या न्यायाधिकरण की भूमिका निभाने तथा पक्षों के अधिकारों का निर्धारण करने की शक्ति नहीं दी गई है। राज्य आयोग न्यायिक चरित्र या न्यायालय के कार्यों का निर्वहन करने वाला कोई न्यायाधिकरण नहीं है।

13. हमारे लिए यह स्पष्ट है कि विधानमंडल ने राज्य आयोग को ऐसा आदेश देने का अधिकार नहीं दिया है जैसा कि दिया गया है। राज्य आयोग द्वारा दिनांक 11-5-2009 के आदेश में दिए गए निर्देशों की वैधता की हम चाहे किसी भी दृष्टिकोण से जांच करें, हमें ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त आदेश राज्य आयोग के अधिकार क्षेत्र, शक्ति या क्षमता से बाहर था। यह एक ऐसा आदेश था जिसे देने का अधिकार राज्य आयोग के पास नहीं था और इसलिए यह एक निरर्थक आदेश था। उच्च न्यायालय ने उस आदेश को सही करने के बजाय एक कदम आगे बढ़कर निर्देश दिया कि बच्चे के साथ-साथ अपीलकर्ता का भी डीएनए परीक्षण कराया जाए।”

8. विकलांग व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों का संरक्षण और पूर्ण भागीदारी) अधिनियम, 1995 और उसके तहत नियमों के तहत मुख्य आयुक्त और आयुक्तों की शक्तियों से निपटते हुए, सर्वोच्च न्यायालय ने **स्टेट बैंक ऑफ पटियाला बनाम विनेश कुमार भसीन²** के मामले में कानून के समान प्रस्ताव को संक्षेप में प्रस्तुत किया है :-

“18. उक्त प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि न तो मुख्य आयुक्त और न ही विकलांगता अधिनियम के तहत कार्यरत किसी आयुक्त को कोई अनिवार्य या निषेधात्मक निषेधाज्ञा या अन्य अंतरिम निर्देश जारी करने का अधिकार है। तथ्य यह है कि विकलांगता अधिनियम उन्हें अपने कार्यों के निर्वहन के लिए सिविल न्यायालय की कुछ शक्तियां



प्रदान करता है (जिसमें शिकायतों पर विचार करने की शक्ति भी शामिल है), लेकिन इससे उन्हें सिविल न्यायालय की अन्य शक्तियां ग्रहण करने में सक्षम नहीं बनाता, जो विकलांगता अधिनियम के प्रावधानों द्वारा उनमें निहित नहीं हैं।"

9. इसी तरह, कलेक्टर, बिलासपुर बनाम अजीत पी.के. जोगी और अन्य³ 3 के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 338(5) के तहत अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिए राष्ट्रीय आयोग के कर्तव्य पर विचार किया और अभिनिर्धारित किया कि आयोग किसी व्यक्ति विशेष की जाति या जनजाति की स्थिति का निर्धारण /न्याय-निर्णयन नहीं कर सकता। रिपोर्ट के प्रासंगिक अंश में निम्नलिखित कथन किया गया है: -

"17. अनुच्छेद 338 के मूल स्वरूप से यह स्पष्ट है कि आयोग का गठन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के व्यक्तियों की सुरक्षा और संरक्षण सुनिश्चित करने के लिए किया गया था : (i) भेदभाव विरोधी, (ii) आरक्षण और सशक्तिकरण के माध्यम से सकारात्मक कार्रवाई, और (iii) शिकायतों का निवारण। अनुच्छेद 338 के खंड 5(बी) के तहत कर्तव्यों का विस्तार जाति /जनजाति प्रमाण पत्र जारी करने या जाति /जनजाति प्रमाण पत्र को रद्द करने या जाति प्रमाण पत्र की वैधता पर निर्णय लेने तक नहीं था। अनुच्छेद 338 के खंड (5) के उपखंड (ख) को ध्यान में रखते हुए, आयोग निःसंदेह अनुसूचित जनजातियों के किसी भी अधिकार और सुरक्षा उपायों से वंचित करने के बारे में किसी भी विशिष्ट शिकायत पर विचार कर सकता है और जांच कर सकता है। जब ऐसी शिकायत प्राप्त होती है, तो आयोग ऐसी शिकायत की जांच कर सकता है और अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण, कल्याण और सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए सुरक्षा उपायों और उपायों के प्रभावी कार्यान्वयन की मांग करते हुए केंद्र सरकार या राज्य सरकार को एक रिपोर्ट दे सकता है। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों और सुरक्षा उपायों से वंचित करने की जांच करने की इस शक्ति में किसी विशेष व्यक्ति की जाति/जनजाति की स्थिति की जांच



करने और निर्णय लेने की शक्ति शामिल नहीं थी। वास्तव में, चूंकि व्यक्तियों को जारी किए गए जाति/जनजाति प्रमाणपत्रों के सत्यापन के लिए कोई प्रभावी तंत्र नहीं था, इसलिए इस न्यायालय ने माधुरी पाटिल बनाम आयुक्त, आदिवासी विकास⁴ में जांच समितियों के गठन का निर्देश दिया था।

23. यह तर्क कि इस तरह के निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए पर्याप्त सामग्री थी, सुसंगत नहीं है। जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, आयोग के कर्तव्यों के दायरे में पक्षों के अधिकारों या पक्षों की जाति स्थिति के संबंध में जांच या न्यायनिर्णयन शामिल नहीं था। यही स्थिति अनुच्छेद 338-ए (जिसे बाद में शामिल किया गया) के अंतर्गत भी है, जिसमें समान कर्तव्यों वाले अनुसूचित जनजातियों के लिए एक पृथक आयोग का प्रावधान किया गया है। इसलिए आयोग का आदेश स्थिर नहीं रखा जा सकता। उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 16-10-2001 के उक्त आदेश को अपास्त करना उचित था।"

10. सर्वोच्च न्यायालय के माननीय न्यायाधीशों द्वारा दिए गए उपरोक्त निर्णयों में प्रतिपादित विधि के सिद्धांत का अनुसरण करते हुए, यह स्पष्ट है कि अधिनियम, 1955 के अंतर्गत गठित छत्तीसगढ़ राज्य अनुसूचित जनजाति आयोग का कार्य सलाहकारी प्रकृति का है। अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों के संबंध में जांच और न्यायनिर्णयन करने की शक्ति और अधिकारिता, अधिनियम, 1955 द्वारा राज्य आयोग को प्रदान नहीं की गई है। इसलिए, अधिनियम, 1955 के तहत गठित आयोग के पास कोई न्यायिक क्षेत्राधिकार नहीं है और इस प्रकार राज्य आयोग न्यायिक प्रकृति या सिविल न्यायालय के कार्यों का प्रयोग करने वाला न्यायाधिकरण नहीं है और वह अनुसूचित जनजातियों के अधिकारों का निर्धारण नहीं कर सकता है। राज्य आयोग, अधिनियम की धारा 9(1) द्वारा उसे सौंपे गए कार्यों के आधार पर, यह देख सकता है कि भारत के संविधान या किसी अन्य समय प्रवृत्त कानून के तहत अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को प्रदान की गई सुरक्षा वास्तव में उन तक पहुंच रही है या नहीं और उनके लिए कार्यक्रमों का उचित कार्यान्वयन और निष्पादन हो रहा है या नहीं और संविधान (एसटी) आदेश, 1950 में कुछ जनजातियों/जनजातियों के समूह को सम्मिलित करने के लिए राज्य सरकार को



सिफारिश भी कर सकता है और सार्वजनिक सेवा में अनुसूचित जनजाति के प्रतिनिधित्व और शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश के लिए आगे की सलाह भी दे सकता है, लेकिन राज्य सरकार को सिफारिश करने और राज्य सरकार को सलाह देने के लिए केवल सक्षम निकाय होने के कारण वह न्यायिक कार्य नहीं कर सकता है।

11. इस स्तर पर, **अखिल भारतीय इंडियन ओवरसीज बैंक एससी और एसटी कर्मचारी कल्याण संघ और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य⁵** के मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर ध्यान देना उचित होगा, जिसमें अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के राष्ट्रीय आयोग द्वारा बैंक को आगे की जांच और आयोग द्वारा अंतिम निर्णय तक पदोन्नति प्रक्रिया को रोकने के निर्देश दिए गए थे, जिस पर प्रश्न उठाया गया है। सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों ने मामले पर विचार किया और अभिनिर्धारित किया कि चूंकि आयोग को अंतरिम निषेधाज्ञा जारी करने का कोई विशेष अधिकार नहीं दिया गया है, तथा यह अधिकार सिविल न्यायालय को प्राप्त है, इसलिए उसे इस प्रकार का आदेश जारी करने का कोई अधिकार नहीं है।

12. **दिल्ली नगर निगम बनाम लाल चंद एवं अन्य⁶** के मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय ने भारतीय संविधान के अनुच्छेद 338 के खंड (5) के उपखंड (ए) पर विचार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति आयोग के पास कोई न्यायिक शक्ति नहीं है और वह केवल तभी शिकायत पर विचार कर सकता है जब शिकायत किसी व्यक्ति को अनुसूचित जाति के वर्ग के रूप में प्रदत्त अधिकारों और प्रदत्त सुरक्षा उपायों से वंचित करने की विशिष्ट घटना से संबंधित हो। पैराग्राफ 10 में, दिल्ली उच्च न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है :-

“10. मेरे विचार में, खंड (5) के उप-खंड (बी) के संदर्भ में भी आयोग द्वारा जांच केवल तभी शुरू की जा सकती है जब शिकायत किसी व्यक्ति को उन अधिकारों और सुरक्षा उपायों से वंचित करने की एक विशिष्ट घटना से संबंधित हो, जो अनुसूचित जातियों के एक वर्ग के रूप में हैं। केवल अनुसूचित जाति के व्यक्ति के किसी नागरिक अधिकार से वंचित करना ही ऐसी जांच का विषय हो सकता है। यह मानना कि आयोग अनुसूचित जाति के किसी व्यक्ति

5 (1996) 6 SCC 606

6 W.P. (C) No. 5468/2011 decided on 19-9-2013



द्वारा की गई किसी विशिष्ट शिकायत की जांच कर सकता है , चाहे शिकायत की प्रकृति कुछ भी हो , "अनुसूचित जातियों के अधिकारों और सुरक्षा उपायों से वंचित करने के संबंध में" शब्दों को पूरी तरह से निरर्थक बना देगा , जो निश्चित रूप से विधायी मंशा नहीं हो सकती है। यदि विधानमंडल की मंशा अनुसूचित जाति के किसी व्यक्ति द्वारा की गई शिकायत की जांच करने का कर्तव्य आयोग को सौंपने की होती , तो उप-खण्ड (ख) का शब्दांकन बिल्कुल भिन्न होता। यदि विधानमंडल की मंशा अनुसूचित जाति के किसी व्यक्ति द्वारा की गई शिकायत की जांच करने का कर्तव्य आयोग को सौंपने की होती , तो उप-खण्ड (ख) का शब्दांकन बिल्कुल भिन्न होता। उस मामले में विधानमंडल ने बिना किसी शर्त के कहा होगा कि अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जातियों से संबंधित किसी व्यक्ति द्वारा की गई विशिष्ट शिकायतों की जांच करना आयोग का कर्तव्य होगा। कई अधिकार और सुरक्षाएं केवल अनुसूचित जातियों के लोगों के लिए ही उपलब्ध हैं,सार्वजनिक नियुक्तियों और शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश में आरक्षण ऐसे ही उदाहरण हैं। कुछ अन्य उदाहरण लें , यदि राज्य की कोई कल्याणकारी योजना या राज्य का कोई साधन केवल अनुसूचित जातियों के सदस्यों के लाभ के लिए है , तो उक्त योजना के लाभ से वंचित करने के आरोप वाली किसी भी शिकायत की निश्चित रूप से आयोग द्वारा जांच की जा सकती है । इसके अलावा, राज्य के कुछ निकायों द्वारा विभिन्न आवंटनों में आरक्षण किया जाता है , जैसे कि दिल्ली विकास प्राधिकरण द्वारा भूखंडों/फ्लैटों का आवंटन तथा तेल विपणन कम्पनियों द्वारा पेट्रोल पंपों/एल.पी.जी. आउटलेटों का आवंटन । ऐसे मामलों से संबंधित विशिष्ट शिकायतें भी आयोग के ध्यान में लाई जा सकती हैं तथा आयोग द्वारा उनकी जांच की जा सकती है । ऐसे मामलों से संबंधित विशिष्ट शिकायतें भी आयोग के ध्यान में लाई जा सकती हैं तथा आयोग द्वारा उनकी जांच की जा सकती है। एक अन्य उदाहरण लें , यदि अनुसूचित जाति से संबंधित किसी व्यक्ति को राज्य द्वारा जाति प्रमाण पत्र देने से मना कर दिया जाता है , तो वह इस संबंध में आयोग में शिकायत कर सकता है , क्योंकि ऐसे प्रमाण पत्र केवल





अनुसूचित जाति के सदस्यों को प्रदत्त अधिकारों का लाभ उठाने के लिए मांगे जाते हैं। यदि राज्य अनुसूचित जातियों के सदस्यों को वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए कोई योजना लाता है, तो ऐसे लाभ से इनकार करने का आरोप लगाने वाली कोई भी शिकायत भी आयोग के संज्ञान में लाई जा सकती है तथा आयोग द्वारा इसकी जांच की जा सकती है। लेकिन विवादित मुद्दे जैसे कि संपत्ति पर स्वामित्व का दावा, जो अपनी प्रकृति से, एक न्यायिक निकाय द्वारा न्यायनिर्णयन में शामिल है, उप-खंड (बी) के संदर्भ में जांच का विषय नहीं हो सकता है, भले ही शिकायतकर्ता अनुसूचित जाति से संबंधित हो। संपत्ति पर कानूनी अधिकार का दावा प्रत्येक नागरिक द्वारा किया जा सकता है, चाहे वह अनुसूचित जाति से संबंधित हो या नहीं और राज्य या उसके किसी साधन द्वारा संपत्ति से वंचित करने का आरोप लगाने वाली शिकायत निश्चित रूप से केवल अनुसूचित जातियों के अधिकारों और सुरक्षा उपायों से वंचित करने से संबंधित मामला नहीं होगी....."

13. मामले के तथ्यों पर वापस लौटते हुए उपरोक्त निर्णयों से प्रवाहित कानून के सिद्धांतों पर ध्यान देने के बाद, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि प्रतिवादी संख्या -2 ने अपनी एसीआर में सुधार / उन्नयन के साथ-साथ भूतलक्षी प्रभाव से पदोन्नति का दावा किया है और साथ ही अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के प्रावधानों के तहत याचिकाकर्ता कंपनी के अधिकारियों के खिलाफ आपराधिक मामला दर्ज करने का दावा किया है, जिसमें उनके खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई भी शामिल है। उत्तरवादी क्रमांक-2 द्वारा दावा की गई कोई भी अनुतोष संविधान के तहत और तत्समय लागू किसी अन्य कानून के तहत अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को दी गई सुरक्षा से संबंधित नहीं है। ऐसा नहीं है कि अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को दिया जाने वाला आरक्षण उन्हें नहीं दिया जा रहा है या उन्हें किसी विशेष कॉलेज में आरक्षित सीट पर प्रवेश नहीं दिया जा रहा है। दावा की गई अनुतोष पूरी तरह से सेवा संबंधी मामले से संबंधित हैं, जिन पर क्षेत्राधिकार प्राप्त न्यायालय द्वारा विचार किया जा सकता है तथा उन्हें प्रदान किया जा सकता है। जहां तक अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के तहत याचिकाकर्ता कंपनी के अधिकारियों के खिलाफ मामला दर्ज करने की अनुतोष का प्रश्न है, उस पर भी



क्षेत्राधिकार प्राप्त दांडिक न्यायालय द्वारा उस संबंध में सक्षम रूप से किए गए आवेदन/शिकायत पर विचार किया जा सकता है और उसे प्रदान किया जा सकता है। इसलिए, इनमें से कोई भी अनुतोष अधिनियम, 1995 की धारा 9(1) (ए) के दायरे में नहीं आती है, जिसके लिए प्रतिवादी अनुसूचित जाति/जनजाति आयोग द्वारा संज्ञान लिया जाना आवश्यक हो। इस प्रकार, प्रतिवादी आयोग का यह अभिनिर्धारण पूरी तरह अनुचित है कि अधिनियम, 1995 की धारा 9(1)(ए) के तहत ऐसी अनुतोष, जिसका दावा प्रतिवादी संख्या 2 ने किया है, दी जा सकती है।

14. उपरोक्त चर्चा के परिणामस्वरूप, प्रतिवादी आयोग द्वारा दिनांक 13-4-2017 को पारित आदेश तथा विविध प्रकरण क्रमांक 612/2017 की कार्यवाही को निरस्त किया जाता है। यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जहां तक दिनांक 6-1-2017 के आवेदन में दावा की गई अनुतोष का संबंध है, आयोग को सुनवाई करने और सिफारिशें करने का कोई अधिकार नहीं है। तदनुसार, प्रतिवादी संख्या 1 को मामले में आगे बढ़ने से रोका जाता है।

15. रिट याचिका को ऊपर वर्णित सीमा तक स्वीकार की जाती है तथा पक्षकारों को अपना वाद-व्यय स्वयं वहन करने के लिए छोड़ दिया जाता है।

	हस्ता/- (संजय के. अग्रवाल) न्यायाधीश
--	--



2017:सीजीएचसी:16697

W.P.(C) No.1735/2017

12

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका (सिविल) क्रमांक- 1735/2017

छत्तीसगढ़ राज्य विद्युत उत्पादन कंपनी लिमिटेड

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य अनुसूचित जन जाति आयोग एवं अन्य

Head Note

Chhattisgarh Rajya Anusuchit Jan Jati Aayog has no jurisdiction to entertain service dispute relating to up-gradation of ACR and promotion from retrospective date.

शीर्ष टिप्पणी

छत्तीसगढ़ राज्य अनुसूचित जन जाति आयोग के पास वार्षिक गोपनीय प्रतिवेदन के उन्नयन तथा पूर्वप्रभावी तिथि से पदोन्नति वाबत सेवा संबंधी विवाद पर विचार करने का क्षेत्राधिकार नहीं है ।

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।